धर्मोंकी फुलवारी

श्रीकृष्णदत्त भट्ट

सर्व सेवा संघ प्रकाशन

प्रकाशक : मन्त्री, सर्व सेवा संघ,
राजघाट, वाराणसी

संस्करण : पहला : मई, १९६३ : ३,०००
दूसरा : मार्च, १९६४ : ५,०००
तीसरा : सितम्बर, १९६५ : ५,०००
चौथा : जुलाई, १९६८ : २५,०००
पाँचवाँ : अगस्त, १९६८ : ५,०००

कुल प्रतियाँ : ४३,०००

मुद्रक : विश्वनाथ भार्गव,
मनोहर प्रेस,
जतनबर, वाराणसी

मूल्य : ७५ पैसे

[संशोधित तथा परिवर्धित संस्करण]

Title : DHARMON KI PHULVARI
Author : Shrikrishna Datta Bhatta
Subject : Religion
Publisher : Secretary,
Sarva Seva Sangh,
Rajghat, Varanasi

Edition : First : May, '63 : 3,000
: Second : March, '64 : 5,000
: Third : September, '65 : 5,000
: Fourth : July, '68 : 25,000
: Fifth : August, '68 : 5,000

Total Copies : 43,000
Price : 75 Paise

प्र का श की य

मनुष्यको मनुष्यसे मिलानेवाली चीजका नाम है धर्म। दिलोंको दिलोंसे जोड़नेवाली इस चीजकी बुनियाद है—सत्य, प्रेम और करुणा।

विश्वके सभी प्रसिद्ध धर्म इसी आधार-शिलापर खड़े हैं। परन्तु कठिनाई यह आ गयी है कि हमने मूलको तो छोड़ दिया है, पत्तोंको पकड़कर बैठ गये हैं। बाहरकी छोटी-छोटी बातोंको लेकर हम आपसमें आये दिन लड़ते-झगड़ते रहते हैं।

'धर्म क्या कहता है ?' इस पुस्तक-मालाकी १२ पुस्तकोंमें यह बताया गया है कि धर्मका वास्तविक लक्ष्य और उद्देश्य क्या है ? संसारके सभी प्रसिद्ध धर्मों—वैदिक धर्म (३ भाग), जैन धर्म, बौद्ध धर्म, पारसी धर्म, यहूदी धर्म, ताओ धर्म, कनफ्यूश धर्म, ईसाई धर्म, इसलाम धर्म और सिख धर्म—का सरल विवेचन करते हुए यह समझाया गया है कि सच्चा धर्म क्या है और उसमें किस बातपर सबसे ज्यादा जोर दिया गया है।

प्रसन्नताकी बात है कि भारत सरकारने 'धर्म क्या कहता है ?' पुस्तक-मालाकी इस पहली पुस्तक—'धर्मोंकी फुलवारी' को नवसाक्षरोंके लिए साहित्यकी दसवीं पुरस्कार-प्रतियोगिताके अन्तर्गत सन् १९६४ में पुरस्कृत किया है। फरवरी १९६५ में 'धर्महरूको फूलवारी' नामसे इसका नेपाली अनुवाद भी प्रकाशित किया गया है। वैदिक धर्म (३ भाग) का भी नेपाली अनुवाद प्रकाशित किया गया है।

हम मानते हैं कि इस पुस्तक-मालाको पढ़कर भिन्न-भिन्न धर्मोंको माननेवाले लोग एक-दूसरेके निकट आयेंगे और दिन-दिन सच्चे मानव-धर्मकी ओर बढ़ेंगे। तभी धर्मका सच्चा उद्देश्य पूरा हो सकेगा।

अनुक्रम

यं शैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनो।
बौद्धाः बुद्ध इति प्रमाणपटवः कर्तेति नैयायिकाः॥
अर्हन्नित्यथ जैनशासनरताः कर्मेति मीमांसकाः।
सोऽयं वो विदधातु वाञ्छितफलं त्रैलोक्यनाथो हरिः॥

हे तीन लोकके स्वामी, हे त्रिलोकीनाथ,
शैव लोग 'शिव' के रूपमें आपकी उपासना करते हैं।
वेदान्ती लोग 'ब्रह्म' के रूपमें आपकी उपासना करते हैं।
बौद्ध लोग 'बुद्ध' के रूपमें आपकी उपासना करते हैं।
प्रमाणके विवेचनमें चतुर नैयायिक लोग 'कर्ता' के रूपमें आपकी उपासना करते हैं।
जैन लोग 'अर्हत्' के रूपमें आपकी उपासना करते हैं।
मीमांसक लोग 'कर्म' के रूपमें आपकी उपासना करते हैं।
ये सब आपके ही भिन्न-भिन्न रूप हैं।
आप हम सबकी, सारे संसारकी मनोकामना पूरी करें।

तुकड़ो महाराज कहते हैं :

गाओ भाई! सब देवनको, सब सन्तनको गाओ।
तन-मनसे ध्यान लगाओ॥
सभी धर्म और सभी पंथ ये मानव-सुखको बनाये।
समय-समयपर रूप बदलकर अपना फर्ज सुनाये॥
कोई कहत हैं पीर पैगम्बर, कोई रामके नामा।
ईशु ख्रिस्तको कोई भजत हैं, कोई रटे दिल श्यामा॥

अलख निरंजन निर्गुण प्रभुकी सबमें शक्ति समायी।
चाहे उसको ब्रह्म पुकारो या अल्ला कहो भाई॥
जगत्-पिताकी यह रचना है, सबमें न्यारी-न्यारी।
जिसका जो कोई धर्म वर्म है, हो उसको वहि तारी॥
हम सब एक, अनेक हुए हैं जग-सौंदर्य बनाने।
'तुकड्यादास' कहे यह निज-धन गुरुका प्यारा जाने॥

कैसी अच्छी है धर्मों और पंथोंकी यह फुलवारी !
सब फूलोंकी बनावट, खुशबू, रौनक तरह-तरहकी है।
और यही तो है उस परम प्रभुकी करामात !

जिस सिम्त नजर कर देखे हैं,
उस दिलवरकी फुलवारी है।
कहीं सब्जीकी हरियाली है,
कहीं फूलोंकी गिलकारी है॥

तरह-तरहके फूल

इस फुलवारीमें गुलाब भी है, चमेली भी। चम्पा भी है, जूही भी। रजनीगंधा भी है, सूरजमुखी भी। इसमें केसरके पौधे भी हैं, यूकेलप्टसके वृक्ष भी।

एकसे एक बढ़िया, एकसे एक खुशबूदार फूल हैं इसमें। जिसे देखिये, उसकी शोभा निरखते ही रह जाइये ! अपनी-अपनी जगह हर फूल, हर कली नायाब है। हर फूलकी खुशबू अपने ढंगकी है। किसीकी गंध बहुत तेज है, किसीकी भीनी। किसीकी सुगंध तो दूरसे ही मस्त कर देनेवाली है।

यह रंग-बिरंगी फुलवारी

यह फुलवारी लाल, गुलाबी, पीले, हरे, नील, नी
आदि तरह-तरहके रंगीन फूलोंसे सजी है।

नित-नूतन बहार रहती है इसमें।

फूलोंका यह सौंदर्य किसे प्यारा नहीं लगता ?
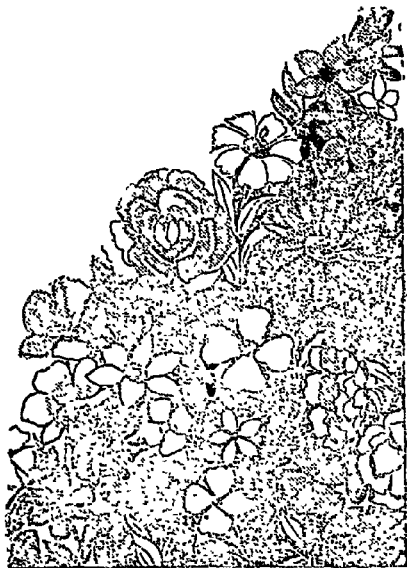
फूलोंकी यह खुशबू किसे मस्त नहीं करती ?

अभागा है वह, जो आँख खोलकर इस सौंदर्यके सागरमें डुबकी नहीं लगाता !

संसारमें अनेक धर्म

ससारमें वहुतसे धर्म हैं। वहुतसे पंथ हैं। वहुतसे सम्प्रदाय हैं। सवकी न्यारी-न्यारी शोभा है। सवके न्यारे-न्यारे रास्ते हैं।

यह निरालापन वहुत वढ़िया है। जरूरत इस वातकी है कि हम इस निरालेपनका आनन्द लें। अपनी कोठरीमें ही हम अपनेको वन्द न रखें। खुली हवाका आनन्द लेनेको जरा वाहर भी निकलें।

हम जव अपने दायरेसे वाहर निकलकर दूसरे फूलोंकी ओर कदम वढ़ायेंगे, तो देखेंगे कि हमारा गुलाव जिस तरह अपनी खुशवूसे हमें मस्त करता है, उसी तरह दूसरे फूलोंमें भी, चम्पा और चमेलीमें भी, उसी तरहकी मस्त कर देनेवाली खुशवू है। हमारे गुलावकी पँखुड़ियाँ जैसी मुलायम हैं, जूही और केसरकी पँखुड़ियाँ भी उससे कम मुलायम नहीं हैं।

इस मस्तीमें डूवकर हमारा रोम-रोम पुकारने लगेगा :

> जिधर देखता हूँ उधर तू ही तू है,
> कि हर शय में जलवा तेरा हूवहू है!

धर्मका अर्थ

एक था बिच्छू। नदीमें बहा जा रहा था वह।
एक साधुने देखा तो हाथ बढ़ाकर खींच लिया।
बिच्छूने तुरत उन्हें डंक मार दिया।
हाथ हिला और बिच्छू फिर पानीमें गिर पड़ा।
साधुने उसे फिर हाथ बढ़ाकर खींच लिया।
बिच्छूने फिर डंक मार दिया।

पानीमें वह फिर गिर गया। साधुने उसे खींच लिया, तो बिच्छूने फिर डंक मार दिया।

फिर वह पानीमें गिरा तो साधुने फिर उसे खींचा।

उसने फिर डंक मारा, पर साधुने फिर उठा लिया।

एक आदमीने पूछा : "बाबा, आप यह क्या करते हैं? बिच्छू बार-बार काट लेता है, फिर भी आप बार-बार उसे उठा लेते हैं। मरने न दीजिये दुष्टको!"

साधु बोले : "बेटा, डंक मारना उसका धर्म है, बचाना मेरा धर्म। वह अपना धर्म नहीं छोड़ता, तो मैं ही अपना धर्म क्यों छोड़ दूँ?"

सबका अपना-अपना धर्म

हर चीजका अपना-अपना धर्म होता है।

हर प्राणीका अपना-अपना धर्म होता है।

हर मनुष्यका अपना-अपना धर्म होता है।

डंक मारना बिच्छूका धर्म है, दया करना आदमीका।

जलाना आगका धर्म है, बुझाना पानीका।

खुशबू देना फूलका धर्म है, स्नेह देना माँका।

क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा—सबका अपना-अपना धर्म है। पशु और पक्षी, चर और अचर—सबका अपना-अपना धर्म है।

सब अपने-अपने धर्मका पालन करते हैं।

धर्मका अर्थ

हमारा जो धर्म है, उसका हम पालन करें। यह हमारा कर्तव्य है।

इस तरह देखें तो धर्मका अर्थ होता है—कर्तव्य।

पर, धर्म इतना ही नहीं है। धर्मका अर्थ इससे कहीं व्यापक है।

धर्ममें कर्तव्य तो आता ही है, टिकाऊपन भी आता है, पवित्रता भी आती है, विश्वास भी आता है, श्रद्धा भी आती है। तुलसी बाबाने कहा है:

श्रद्धा बिना धर्म नहिं होई।

वेदमें धर्मका अर्थ बताते हुए कहा गया है:

सत्यं बृहद् ऋतम् उग्रं
दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवी धारयन्ति।

—अथर्ववेद १२।१।१

सत्य, ऋत, दीक्षा, तप, ब्रह्म और यज्ञ—इन्हींपर यह पृथिवी टिकी हुई है। यही है धर्म।

वैशेषिक दर्शनमें कहा है:

यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः।

धर्म वह है, जिससे मनुष्यकी इस लोकमें उन्नति होती है और परलोकमें मोक्ष मिलता है।

लोक लाहु परलोक निबाहू।

मनु महाराजने कहा है:

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥

धर्मके १० लक्षण हैं: धृति, क्षमा, दम, चोरी न करना, भीतरी-बाहरी सफाई, इन्द्रियोंका निग्रह, बुद्धि, विद्या, सत्य और क्रोध न करना।

अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
एतं सामासिकं धर्मं चातुर्वर्ण्येऽब्रवीन्मनुः॥

मनु महाराजने चारों वर्णोंके लिए जो धर्म बताया है, उसमें पाँच बातोंपर जोर दिया है :

अहिंसा, सत्य, चोरी न करना, स्वच्छता और इन्द्रियोंका संयम।

गोस्वामी तुलसीदासने रामायणमें कहा है :

> परम धर्म श्रुतिविदित अहिंसा।
> परनिन्दा सम अघ न गिरीसा॥

अहिंसा—किसीको न सताना—सबसे बड़ा धर्म है। सबसे बड़ा पाप है—दूसरेकी निन्दा।

> दया धरमका मूल है, पाप मूल अभिमान।
> 'तुलसी' दया न छाँड़िये, जब लगि घटमें प्रान॥

और—

> परहित सरिस धर्म नहिं भाई।
> परपीड़ा सम नहिं अधमाई॥

दूसरेका भला करनेसे बढ़कर कोई धर्म नहीं। दूसरेको सतानेसे बढ़कर कोई पाप नहीं।

> धरम न दूसर सत्य समाना।
> आगम निगम पुरान बखाना॥

सबसे बढ़कर धर्म है—सत्य।

मतलब, 'धर्म' बहुत व्यापक शब्द है। उसके भीतर वे सब गुण आ जाते हैं, जो हर मनुष्यमें होने ही चाहिए। जैसे—सत्य, प्रेम, करुणा, क्षमा, इन्द्रियोंका संयम, स्वच्छता, पवित्रता, नम्रता आदि।

धर्मका अर्थ है—हर प्राणीसे प्रेम।

धर्मका अर्थ है—ऐसा आचरण, जिससे अपनेको भी लाभ हो, दूसरोंको भी।

धर्मका अर्थ है—सदाचार। अच्छा आचरण।

धर्मका अर्थ है—सत्य। जीवनमें ईमानदारी बरतना। चोरी नहीं करना। किसीको सताना नहीं। किसीको धोखा नहीं देना।

धर्मका अर्थ है—संयम। अपनेको काबूमें रखना। किसी भी इन्द्रियको इधर-उधर न भटकने देना। दूसरोंको क्षमा करना।

धर्मका अर्थ है—करुणा। सबपर दया करना। खुद कष्ट उठाकर भी दूसरोंको सुख पहुँचाना।

धर्मके दूसरे पर्याय

'धर्म' शब्द बहुत व्यापक है। उसका ठीक-ठीक पर्याय मिलना कठिन है। अंग्रेजीमें उसे 'रिलीजन' कहते हैं। 'रिलीजन' लातीनी भाषाका शब्द है। उसका अर्थ होता है—'फिरसे बाँधना या सम्बन्ध जोड़ना'।

'इसलाम' शब्द 'सल्म' शब्दसे बना है। उसका अर्थ होता है—'शांति'। ईश्वरकी शांतिपूर्ण स्वीकृति। उसके लिए आत्म-त्याग करना। ईश्वरकी शरणागति। अहंकारको मिटाना और सर्वात्मभावको स्वीकार करना।

वेदमें 'धर्म' शब्द आता है—सबको धारण करनेवाली वस्तुके

लिए, सबको एक सूत्रमें बाँधनेवाली वस्तुके लिए। 'रिलीजन' का भी वही अर्थ है। 'इसलाम' भी उसी दिशामें जाता है।

घट-घटमें बसे हुए तत्त्वको जानना, आत्माको जानना, परमात्माको जानना ही तो धर्म है।

जो व्यक्ति इस ज्ञानको पा लेता है, वह सब कुछ पा लेता है।

इस ज्ञानको पानेके रास्ते जुदे-जुदे हैं, पर उनसे घबड़ानेकी जरूरत नहीं।

गाय काली हो, भूरी हो, लाल हो, सफेद हो; दूध सबका एक-सा ही होता है—स्वच्छ, श्वेत और पवित्र। मीठा और मनोहर!

धर्मके दो रूप

: २ :

एक था हाथी।

कुछ अंधे उसे देखनेके लिए गये।

सबने अपने-अपने हाथसे टटोलकर उसे देखा।

एक अंधेका हाथ उसकी सूँडपर लगा।

एकका हाथ उसके कानपर लगा।

एकका हाथ उसके दाँतपर लगा।
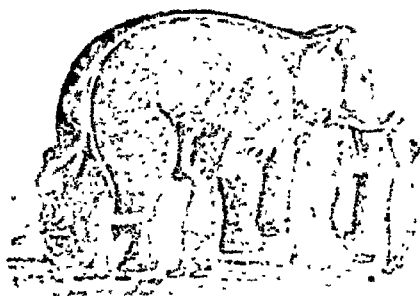
एकका हाथ उसके पैरपर लगा।

एकका हाथ उसके पेटपर लगा।

एकका हाथ उसकी पूँछपर लगा।

हाथी देखकर वे लोग लौटे, तो वे बताने लगे कि हाथी कैसा होता है।

एक बोला : हाथी साँपकी तरह होता है।
दूसरा बोला : नहीं जी, हाथी बड़ी गदा जैसा होता है।
तीसरा बोला : नहीं-नहीं, हाथी सूपकी तरह होता है।
चौथा बोला : वाह, हाथी खम्भेकी तरह होता है।
पाँचवाँ बोला : नहीं जी, हाथी नगाड़े जैसा होता है।
छठा बोला : नहीं, हाथी झाड़ूकी तरह होता है।

जिस अंधेने हाथीका जो अंग छुआ था, उसीको लेकर वह झगड़ने लगा कि हाथी ऐसा होता है।

एक ही हाथीके कई अंग

आँखवाला एक आदमी उधरसे निकला। उसने कहा : 'भाइयो, तुम बेकार झगड़ते हो। हाथीकी सूँड़ साँपकी तरह होती है। उसका दाँत गदाकी तरह होता है। उसके कान सूपकी तरह होते हैं। उसके पैर खम्भेकी तरह होते हैं। उसका पेट नगाड़ेकी तरह होता है। उसकी पूँछ खुरदरी झाड़ूकी तरह होती है। तुम सबने अलग-अलग उसका एक-एक ही अंग देखा है। उसके सूँड भी है, दाँत भी। कान भी हैं, आँख भी। पैर भी हैं, पेट और पीठ भी। इन सबसे मिलकर जो बना है, उसका नाम है हाथी।'

धर्मका भी यही हाल

धर्मका भी हाल ऐसा ही है। वह भी हाथीकी तरह बहुत व्यापक है। उसके बहुत-से अंग हैं। पर, तमाशा यही है कि कोई उसके किसी अंगको पकड़कर बैठ गया है, कोई किसी

अंगको। जिसने जो अंग पकड़ लिया, वह उसीको पूरा धर्म मान बैठा है। हम उन अंधोंकी तरह ही आपसमें लड़ते-झगड़ते हैं। मैं कहता हूँ कि 'मैंने जो बात पकड़ ली, वही सही है; तू जो कहता है, सो गलत है।' तुम भी यही बात दुहराते हो।

मुण्डे-मुण्डे मतिर्भिन्ना

एक कहता है कि राम जपेगा, तभी तरेगा।

दूसरा कहता है कि अल्लाह और पैगम्बरपर ईमान लायेगा, तभी तरेगा।

तीसरा कहता है कि प्रभु ईशूकी शरण लिये बिना उद्धार होनेवाला नहीं।

चौथा कहता है कि 'बुद्धं शरणं गच्छामि' कहेगा, तभी बेड़ा पार होगा।

पाँचवाँ कहता है कि मूर्ति और मन्दिरमें श्रद्धा होनेसे ही वैतरणी पार कर सकेगा।

छठा कहता है कि अहुर मज्दपर जबतक विश्वास नहीं करेगा, तबतक शैतानके चक्करमें पड़ा रहेगा।

अपनी डफली, अपना राग

इस तरह सब अपनी-अपनी डफलीपर अपना-अपना राग अलाप रहे हैं।

कोई मानता है कि मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारा या गिरजा-घरमें जाना ही धर्म है।

कोई मानता है कि धर्म-ग्रन्थोंका पाठ करना ही धर्म है।

कोई मानता है कि तीर्थ-व्रत करना ही धर्म है।

कोई मानता है कि हमारे बाप-दादे या हमारे घरवाले जिस धर्मको मानते आये हैं, उसको मानते रहना ही धर्म है।

कोई मानता है कि फलाँ तरहसे आचार-विचारका पालन करते रहना ही धर्म है।

कोई मानता है कि ईश्वरका नाम लेते रहना ही धर्म है।

धर्म है क्या ?

सवाल है कि आखिर धर्म है क्या ?

लोग तरह-तरहसे इस सवालका जवाब देते हैं। पुजारी और महन्त, पादरी और मुल्ला, धर्मोपदेशक और दार्शनिक, गुरु और अध्यापक, विचारक और वैज्ञानिक, समाजशास्त्री और राजनीतिज्ञ—अपने-अपने ढंगपर धर्मकी व्याख्या करते रहे हैं। सबने अपनी-अपनी रीतिसे धर्मको समझानेकी कोशिश की है, पर देखनेमें यही आया है कि धर्मके ऊपरी रूपपर ही सभी अटककर रह गये। धर्मके असली रूपपर, धर्मके बुनियादी रूप-पर बहुत कम लोगोंने जोर दिया है। इसीलिए धर्मके नामपर इतने झगड़े होते रहे हैं।

कितनी गलत बात है यह !

मनुष्यके मनकी भूख

मनुष्य इस धरतीपर जब आँखें खोलता है, तभीसे उसके मनमें तरह-तरहके विचार उठने लगते हैं। जैसे-जैसे वह बड़ा

होता है, उसके विचार गम्भीर होने लगते हैं। वह तरह-तरहकी बातें सोचने लगता है।

'मैं कौन हूँ ? कैसे पैदा हुआ ? इस जन्मसे पहले कहाँ था ? मरकर कहाँ जाऊँगा ? ईश्वरने यदि मुझे पैदा किया तो ईश्वर कौन है ? कैसा है ? मेरे जीवनका लक्ष्य क्या है ? सत्य क्या है ? असत्य क्या है ? प्रेम क्या है ? कर्तव्य क्या है ? अकर्तव्य क्या है ?' ऐसे एक नहीं, अनेक प्रश्न हमारे मनमें उठते हैं। हम इनका उत्तर चाहते हैं। यह है हमारे मनकी भूख।

लोक-परलोक, ईश्वर, जन्म-मृत्यु, सत्य-असत्य आदिके सम्बन्धमें मनमें उठनेवाले प्रश्नोंका उत्तर हमें जहाँसे मिलनेकी आशा रहती है—उसका नाम है 'धर्म'।

धर्म इस तरहके तमाम प्रश्नोंका उत्तर देनेकी कोशिश करता रहा है। सभी धर्मोकी बुनियाद इन्हीं सवालोंको लेकर पड़ी है।

धर्मके दो रूप : आचार और विचार

धर्मके दो रूप हैं : १. ऊपरी, २. भीतरी। कुछ बातें ऊपरसे आचरण करनेकी होती हैं, कुछ भीतरसे।

आचार और विचार—दोनोंको लेकर धर्म बनता है।

आचार बाहरी होता है, विचार भीतरी।

आचार स्थूल होता है, विचार सूक्ष्म।

आचारमें धर्मके नामपर की जानेवाली तरह-तरहकी क्रियाएँ होती हैं। जैसे : पूजा, उपासना, आराधनाकी अनेक पद्धतियाँ,

जप-तप, तीर्थ-व्रत, तिथि-त्योहार, रीति-रिवाज, खान-पान आदिके तौर-तरीके।

विचार है धर्मकी मूल आधार-शिला।

विचारमें आती हैं धर्मकी बुनियादी बातें।

विचारमें आती हैं कर्तव्य और अकर्तव्यकी बातें।

विचारमें आती हैं चित्त-शुद्धिकी साधनाएँ।

आचारमें पवित्रतापर, पवित्रताके बाहरी नियमोंपर, बाहरी आचरणपर जोर दिया जाता है। विचारमें धर्मके मूल तत्त्वपर।

दोनोंका उद्देश्य—चित्तकी शुद्धि

उद्देश्य दोनोंका एक ही है—चित्तकी शुद्धि। चित्त जब शुद्ध होगा, तो मनुष्य-जीवन सफल हो उठेगा। चित्त शुद्ध नहीं हुआ तो भले ही हम एक करोड़ राम-नाम लिखकर राम-बैंकमें चढ़ा दें, भले ही कोटि-कोटि गायत्रीका जप कर लें, रोज पाँच बार नमाज पढ़ लें—उससे क्या होना-जाना है!

असली साधना भीतरकी है, हृदयको पवित्र करनेकी। वह है तो सब कुछ है, वह नहीं तो कुछ नहीं।

सारे झगड़े धर्मके बाहरी रूपको लेकर होते हैं, भीतरी रूप तो सबका एक ही है। उसमें झगड़ेकी गुञ्जाइश ही कहाँ?

दामनी तोड़ी तो मालाको गढ़ा।
पर निगाहे हकमें वह भी थी तिला॥

जप माला छापा तिलक ! : ४ :

हर धर्मका अपना बाहरी रूप होता है।

हर धर्मके अपने धर्म-ग्रन्थ होते हैं।

हर धर्मका अपना दर्शन होता है।

हर धर्मके अपने आराध्य, अपने देवता होते हैं।

हर धर्मकी पूजा, उपासनाकी अपनी पद्धति होती है।

हर धर्मके अपने तीर्थ होते हैं

हर धर्मके अपने उत्सव होते हैं।

हर धर्मके आचार-व्यवहारके अपने नियम होते हैं।

हर धर्मके अपने आदर्श होते हैं।

हर धर्मके अपने प्रतीक होते हैं। अपनी कुछ प्रिय वस्तुएँ होती हैं। अपनी कुछ विशेषताएँ होती हैं।

कुछ धर्मोंके बाहरी रूपोंको देखनेसे यह बात समझमें आ जायगी।

हिन्दू धर्म

हिन्दू धर्म बहुत व्यापक धर्म है। उसके धर्म-ग्रन्थ भी बहुत-से हैं। उनमें वेद, उपनिषद्, महाभारत, गीता, रामायण, मनु-स्मृति, भागवत, पुराण आदि बहुत प्रसिद्ध हैं।

हिन्दू धर्ममें उपासनाकी खुली छूट है। यहाँ ब्रह्म, ईश्वर, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, राम, कृष्ण, गणपति, हनुमान् आदिकी ही नहीं, ३३ कोटि देवी-देवताओंकी उपासनाका विधान है। साकार उपासना भी चलती है, निराकार भी। सगुण भी, निर्गुण भी। इष्ट-देवताकी भी पूजा की जाती है, कुल-देवता और ग्राम-देवताकी भी। तपस्या भी की जाती है, ध्यान भी। नाम-जप भी किया जाता है, कथा-कीर्तन भी।

कोई 'ॐ ॐ' जपता है, कोई 'राम राम'। कोई 'हरे राम हरे राम, राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे' जपता है, कोई 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय'। कोई 'शिव शिव' जपता है, कोई 'तारा तारा'। कोई 'हनुमते नमः' जपता है, कोई 'दुर्गायै नमः'। जिसे जो भाता है, उसीकी वह भक्ति और पूजा करता है।

स्नान, वस्त्र, उपवस्त्र, पुष्प, धूप, नैवेद्य, आरती, पूजा आदिका षोड़शोपचार विधान है। ऋग्वेदके पुरुष-सूक्तके १६ मंत्रोंसे पूजा की जाती है।

देवता, गुरु, माता-पिता, गंगा, गो, ब्राह्मण, साधु-सन्तों आदिकी पूजाका विधान है।

'यज्ञोपवीतं परमं पवित्रम्' बताया गया है। रुद्राक्ष और तुलसीकी माला, तिलक, कमण्डलु, दण्ड, भस्म आदिको पवित्र माना जाता है।

प्रयाग, काशी, मथुरा, बदरी, केदार, द्वारका, जगन्नाथपुरी, रामेश्वरम्, गया आदि अनेक तीर्थ माने गये हैं। विश्वनाथ, चिदम्बरम्, तंजोर, कांजीवरम्, श्रीरंगम्, तिरुपति, मीनाक्षी आदिके मन्दिरोंका दर्शन करनेमें पुण्य माना गया है।

गणेशचतुर्थी, दुर्गापूजा, जन्माष्टमी, रामनवमी, शिवरात्रि, होली, दिवाली आदि त्योहार मनाये जाते हैं।

पवित्रताको लेकर खान-पान, छुआछूत, उठने-बैठने आदिके बहुत-से नियम बने हैं। जो लोग उन नियमोंका ठीकसे पालन नहीं करते, उन्हें लोग आचार-भ्रष्ट मानते हैं।

ऐसा माना जाता है कि धर्मके नियमोंका पालन करनेसे, आचार-व्यवहारसे, पूजा, उपासना और तीर्थयात्रासे मोक्ष मिलता है। सत्य, प्रेम, करुणा, दान और सेवापर बहुत जोर दिया गया है। छोटेसे लेकर बड़ेतक हर प्राणीका आदर करनेको कहा गया है। भूखेको अन्न, प्यासेको पानी, चिड़ियोंको दाना, गौको गोग्रास

देना ही चाहिए। तुलसीको जल चढ़ाना भी आवश्यक बताया है, पीपलको भी। भगवान्ने गीतामें कहा है : अश्वत्थः सर्व-वृक्षाणाम् (वृक्षोंमें मैं पीपल हूँ।) इस तरह सारे प्राणी-जगत्से, सारी सृष्टिसे प्रेम करनेका हिन्दू धर्मका विधान है।

जैन धर्म

अपनेको महावीर भगवान्की संतान माननेवाले 'जैन' कहलाते हैं। फिर वे दिगम्बर हों या श्वेताम्बर, थानकवासी हों या तेरहपंथी, बीसपंथी हों या तारण-पंथी, यापनीय हों या अन्य पंथी। अहिंसा और अनेकान्तवादमें सभी विश्वास रखते हैं। आत्मा, परमात्मा, मोक्ष, संसार आदिके स्वरूपमें उनमें कोई भेद नहीं है। सातों तत्त्वोंका स्वरूप सभी एक-सा मानते हैं। कर्म-सिद्धान्तमें कुछ परिभाषाओंका थोड़ा-सा भेद है।
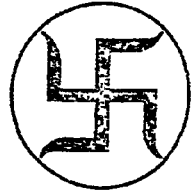
दिगम्बरों और श्वेताम्बरोंमें विश्वास और पूजा-पद्धतिको लेकर थोड़ा-बहुत भेद है।

स्थानकवासी मूर्ति-पूजामें विश्वास नहीं करते। मन्दिर और तीर्थ-यात्रामें भी उनकी विशेष श्रद्धा नहीं है। तेरहपन्थी तो मूर्ति-पूजा मानते ही नहीं।

जैन-धर्मवाले क्षमा, मार्दव–नम्रता, आर्जव–सरलता, शौच—सफाई, सत्य, संयम, तप, त्याग, अकिंचनता–ममता त्यागना और ब्रह्मचर्य—इन दस धर्मोंका दशलक्षण पर्व या पर्यूषण पर्वमें विशेष रूपसे आराधन करते हैं।

श्वेताम्बर सम्प्रदायवाले इसे भाद्रपद कृष्ण द्वादशीसे भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी या पंचमीतक मनाते हैं। पर्यूषण पर्वका अन्तिम दिन 'संवत्सरी' के नामसे प्रसिद्ध है। इस दिन छोटे बच्चेसे लेकर बूढ़ेतक उपवास रखते हैं और प्राणीमात्रसे क्षमा-याचना करते हैं।

दिगम्बर सम्प्रदायवाले भाद्रपद शुक्ल पंचमीसे चतुर्दशीतक दशलक्षण पर्व मनाते हैं। पर्वकी समाप्तिपर सब लोग परस्पर गले मिलते और गत वर्षकी अपनी भूलोंके लिए परस्पर क्षमा माँगते हैं।

पर्यूषण पर्वके अलावा अष्टाह्निका पर्व, महावीरजयन्ती, अक्षय तृतीया, वीरशासन जयन्ती, श्रुतपंचमी, दीपावली, रक्षा-बन्धन आदि त्योहार भी मनाये जाते हैं।

दिगम्बर सम्प्रदायके अनुसार गृहस्थोंके देवपूजा, गुरूपास्ति (गुरूपासना), स्वाध्याय, संयम, तप और दान—ये ६ दैनिक कर्तव्य माने गये हैं।

श्वेताम्बर सम्प्रदायके अनुसार सामायिक, प्रतिक्रमण, वंदन, श्रावकके १२ व्रतोंका पालन, कायोत्सर्ग और प्रत्याख्यान—ये ६ आवश्यक कर्तव्य हैं।

पूजामें जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, धूप, दीप, फल तथा अंगी पूजाका विधान है।

रजोहरण, मोरपिच्छी, मुखवस्त्रिका (मुँह-पत्ती), कटासन, १०८ मनकोंकी माला, चँवर, स्थापना, तिलक आदिको बहुत पवित्र माना जाता है।

सम्मेद शिखर, पावापुरी, गिरनार, पालिताना, देलवाड़ा, श्रवण वेलगोला आदि जैनोंके प्रसिद्ध तीर्थ हैं।

अहिंसाके पालनपर जैन धर्ममें बहुत जोर दिया गया है। रात्रिमें भोजन नहीं करना चाहिए। पानी छानकर पीना चाहिए। मांस, मछली, मधु, मदिरा आदिका त्याग करना चाहिए। वड़, पीपल, पाकर, कटहल, गूलर—इन पाँच फलोंको नहीं खाना चाहिए। हरी मुलेठी, वेर; दूध-दहीमें उड़द, मूँग, चना डालकर बनी चीजें; मूली, गाजर, लहसुन, अदरक, शकरकंद, आलू, घुइयाँ, सूरन, तरबूज; वर्षा ऋतुमें पत्तेवाले साग, खट्टा दही, छाछ; बिना फाड़ी बिना देखी सेम, सरसोंकी फली आदि भी नहीं खानी चाहिए। खानेसे इनमें रहनेवाले जीवोंकी हत्या होती है।

हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह—इन पाँच पापोंको छोड़ देनेका जैन धर्ममें बड़ा आग्रह किया गया है। इन पाँचोंके त्यागका व्रत ही पाँच अणुव्रत हैं। व्रतों और उपवासोंका बड़ा महत्त्व बताया गया है। यहाँतक कि अटल उपसर्ग आनेपर, अकाल पड़नेपर, बुढ़ापा आनेपर और रोग होनेपर धर्मके लिए शरीर भी छोड़ देनेका आदेश दिया गया है। इसे कहते हैं सल्लेखना।

जैन धर्ममें पाँच पद बहुत प्रतिष्ठित माने गये हैं—अर्हन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु। इन्हें 'पंच परमेष्ठी' कहते हैं। 'णमोकार' मंत्रमें इन्हीं पाँचकी वंदना की जाती है। जिन-मन्दिरमें जाकर देवदर्शन करना, पूजा करना, स्वाध्याय करना

श्रावकों और श्राविकाओंका नित्य कर्तव्य माना जाता है। सारी पूजा, उपासना, आचार और व्रतका एकमात्र उद्देश्य है–मोक्ष।

बौद्ध धर्म

भगवान् बुद्धमें विश्वास करनेवाले लोग 'बौद्ध' कहलाते हैं।

भगवान् बुद्धने कोई ग्रन्थ नहीं लिखा। ४०० सालतक उनके उपदेशोंका संग्रह भी नहीं हुआ। बादमें त्रिपिटक और धम्मपदमें उनके मुख्य उपदेश संग्रह कर लिये गये।

बौद्ध धर्मके धीरे-धीरे चार पंथ हो गये—थेरवाद, महायान, तिब्बती और जेन।

चारों पंथ मानते हैं कि चार आर्यसत्यों और अष्टांगिक मार्गसे ही निर्वाण मिल सकता है।

आर्यसत्य

आर्यसत्य ४ हैं :

(१) दुःख—जन्ममें दुःख। बुढ़ापेमें दुःख। रोग-बीमारीमें दुःख। अपने प्रियजनोंके बिछुड़नेमें दुःख। इच्छाकी पूर्ति न होनेपर दुःख।

(२) दुःख-समुदय—दुःखका कारण। यह है तृष्णा। फिरसे पैदा होनेकी तृष्णा। प्रसन्न होनेकी तृष्णा। तरह-तरहकी इच्छाओंकी तृष्णा।

(३) दुःख-निरोध। तृष्णाको पूरी तरह छोड़ देना। तृष्णा गयी तो दुःख गया।

(४) दुःखनिरोधगामिनी प्रतिपद्। दुःखसे छूटनेका, निर्वाणकी ओर जानेका रास्ता—अष्टांगिक मार्ग।

अष्टांगिक मार्ग

अष्टांगिक मार्गमें ८ बातें हैं। आठ रास्ते हैं निर्वाण पानेके :

१. सम्यक् ज्ञान—आर्यसत्यको ठीकसे जानना।
२. सम्यक् संकल्प—पक्का निश्चय।
३. सम्यक् वचन—सच बोलना। वाणीसे किसीको न सताना।
४. सम्यक् कर्मान्त—हिंसा, द्रोह और बुरे आचरणसे बचना।
५. सम्यक् आजीव—न्यायसे, ईमानदारीसे जीविका चलाना।
६. सम्यक् व्यायाम—सत्कर्मके लिए सदा उद्योग करना।
७. सम्यक् स्मृति—लोभ आदि चित्तको दुःख देनेवाली बातोंसे बचना।
८. सम्यक् समाधि—राग-द्वेषको छोड़कर चित्तको एकाग्र करना। ध्यानमें लगाना।

बौद्ध धर्ममें अहिंसापर बड़ा जोर दिया गया है। १०८ मनकोंकी मालापर बौद्ध लोग 'बुद्धं शरणं गच्छामि', 'धम्मं शरणं गच्छामि' और 'संघं शरणं गच्छामि' जपते हैं।

लुम्बिनी, बोधगया, सारनाथ, कुशीनगर, श्रावस्ती, संकाश्य, राजगृह और वैशाली बौद्धोंके तीर्थ माने जाते हैं। विदेशोंसे भी लोग इन तीर्थोंका दर्शन करने आते रहते हैं।

इसलाम

अल्लाह और उसके पैगम्बर हजरत मुहम्मद साहबपर विश्वास करनेवाले लोग मुसलमान कहलाते हैं। उनका धर्म कहलाता है—'इसलाम'।
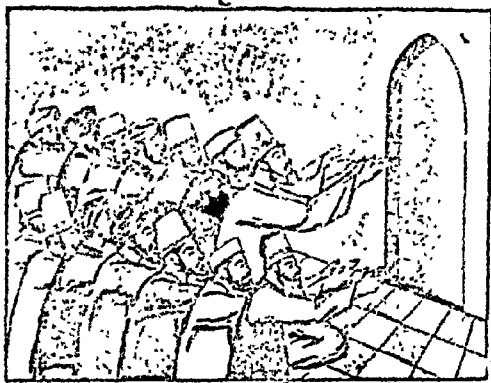
इसलामके पाँच स्तम्भ हैं :

ईमान, नमाज, रोजा, जकात और हज।

'अल्लाहको छोड़कर कोई पूज्य नहीं है। मुहम्मद उसके पैगम्बर हैं।'—यह है ईमान।

नमाज है अल्लाहकी बंदगी। दिनमें पाँच दफा नमाज पढ़नेके लिए कहा गया है।

रमजानके महीनेमें रोजा रखनेका आदेश है। उसके अन्तमें पढ़ी जाती है ईदकी नमाज।

गरीबों, अनाथों, स्कूलों, अस्पतालों आदिके लिए दान देना और हर सालके अन्तमें २॥ फीसदी दान देना है—जकात।

मक्काकी जियारत करना है—हज।

मक्का-मदीनाके अलावा अजमेरमें ख्वाजा साहबकी दरगाह, दिल्लीकी जामा मसजिद, लखनऊका इमामबाड़ा आदि पवित्र माने जाते हैं। कुरानशरीफ मुसलमानोंका धर्मग्रन्थ है। इनके यहाँ १०० मनकोंकी तसबीहपर अल्लाहका नाम जपा जाता है।

सिख धर्म

'सिख' माने शिष्य। गुरुका चेला।

सिख धर्मकी बुनियाद है गुरुकी भक्ति। गुरुकी सेवा। गुर परसादी।

सिखोंके आदिगुरु थे नानकदेव।

सिख धर्ममें दस गुरु हैं। वे सबके सब 'नानक' कहलाते हैं। उनके नाम हैं—नानकदेव, अंगद, अमरदास, रामदास, अर्जुनदेव, हरगोविन्द, हरराय, हरकृष्ण, तेगबहादुर और गोविन्दसिंह।

इन्हीं दस गुरुओंने सिख धर्मको खड़ा किया है।

सिखोंका धर्मग्रन्थ है आदि गुरुग्रन्थ-साहिब। उसके प्रति सिखोंकी असीम श्रद्धा रहती है।

सिख लोग ग्रन्थ-साहिबकी बड़ी भक्तिसे पूजा करते हैं। उसकी धूलि माथेपर लगाते हैं। जब उसका पाठ होता है, तो एक भक्त पीछे खड़ा होकर उसपर पंखा झलता है। भक्त लोग उसपर रुपये-पैसे भी चढ़ाते हैं।
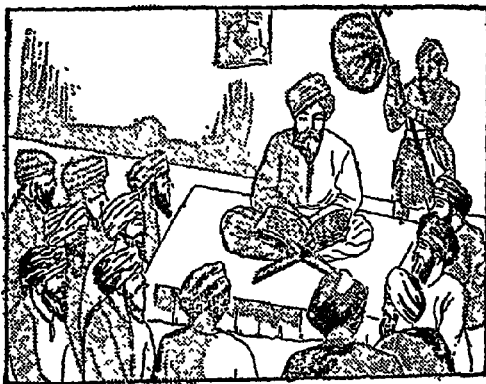
गुरुद्वारेमें ग्रन्थ-साहिबका रोज सुबह-शाम पाठ होता है। कीर्तन होता है। सिख लोग 'सतनाम वाह गुरु' को १०८ मनकोंकी माला जपते हैं। नाम-जपपर उनका जोर रहता है।

केश, कंघा, कच्छा, कड़ा और कृपाण सिख धर्मके पवित्र चिह्न माने जाते हैं। गुरु गोविन्दसिंहने जबसे इन्हें धारण करनेको कहा, तभीसे सिख लोग इन्हें धारण करते आ रहे हैं।

पटनामें गुरु गोविन्दसिंहका जन्म हुआ था, नांदेड़ (हैदराबाद) में देहान्त। पटना, नांदेड़, आनन्दपुर

(अम्बाला) के गुरुद्वारे और अमृतसरका स्वर्ण-मन्दिर सिखोंके पवित्र तीर्थ हैं ।

सिख धर्ममें सत्य—सत श्री अकाल, गुरु नानक और ग्रन्थ-साहिबकी आराधनापर सबसे अधिक जोर दिया जाता है । एक ईश्वरमें सिखोंका विश्वास है । मूर्तियोंकी वे पूजा नहीं करते, पर गुरुग्रन्थ-साहिबकी पूजा करते हैं । जात-पाँतका भेदभाव वे नहीं मानते ।

पारसी धर्म

'होर मज्द' में विश्वास करनेवाले अग्निके उपासक 'पारसी' कहलाते हैं । पारसी धर्मके तीन स्तम्भ हैं—पवित्र विचार, पवित्र वाणी और पवित्र कार्य ।

जरथुश्त्रके ये अनुयायी जरथुश्त्रके चित्रके आगे पूजा-प्रार्थना करते हैं । १०१ मनकोंकी मालापर 'अर्षम् वोहू यथा अहू वइर्यो' जपते हैं । 'अवेस्ता' उनका धर्म-ग्रन्थ है ।

कुश्टी और सदरोको पारसी बहुत पवित्र मानते हैं । अगियारी--अग्निमन्दिर--अतस बहराममें पूजा करना धार्मिक कर्तव्य माना जाता है ।

पारसी धर्ममें इन बातोंपर जोर दिया गया है—पवित्रता, न्याय, संयम, स्वावलम्बन—अपने पैरोंपर खड़े होना, पशुओंकी रक्षा, दया, दान करना, विद्या फैलाना, गरीबोंकी सेवा ।

ईसाई धर्म

प्रभु ईसाके अनुयायी 'ईसाई' कहलाते हैं ।

बाइबिल उनका धर्मग्रन्थ है ।

गिरजाघर उनका पूजा-स्थल है ।

क्रास उनका पवित्र चिह्न है ।

ईसा जहाँ जन्मे, जहाँ मरे, ऐसे स्थान ईसाइयोंके तीर्थ हैं ।

मानवमात्रसे, हर आदमीसे प्रेम करना ईसाई धर्मका आदर्श है ।

इसी तरह सभी धर्मोंके अपने-अपने आचार-विचार हैं । अपने-अपने धार्मिक प्रतीक हैं । सबके अपने-अपने नीति-नियम हैं । कोई पूर्वकी ओर मुँह करके पूजा करता है, कोई पश्चिमकी ओर । कोई दाढ़ी रखता है, कोई चोटी ।

धर्मका यह ऊपरी रूप है ।

पर—इस रूपसे चिपटे रहना गलत है ।

हमें याद रखना चाहिए :

जप माला छापा तिलक, सरै न एकौ काम ।

काम तो तभी सरेगा, जब हम धर्मके भीतरी रूपपर ध्यान देंगे । तभी भगवान् हमपर प्रसन्न होंगे । तभी हमारा बेड़ा पार होगा ।

देह अचार किया कह होई ?　　: ५ :

अबूबिन अधम नामका एक आदमी था ।

भला और भोला ।

एक रातको सोतेसे वह जग पड़ा ।

देखा कि उसके कमरेमें प्रकाश फैला है ।

एक देवदूत बैठा है उसके कमरेमें ।

देवदूतके हाथमें एक सुनहली पुस्तक चमक रही है ।

पुस्तक खुली है और उसपर वह कुछ लिख रहा है ।

अबूने उससे पूछा : 'क्या लिख रहे हैं आप ?'

देवदूतका चेहरा स्नेहसे भरा था । बोला : 'मैं उन लोगोंके नाम लिखता हूँ, जिन्हें ईश्वरसे प्रेम है ।'

अबूने पूछा : 'मेरा नाम भी है उन लोगोंमें ?'

'नहीं, तुम्हारा नाम तो नहीं है।' वह बोला।

अबूने शांति और दृढ़तासे कहा : 'आपसे मेरी प्रार्थना है कि मेरा नाम उन लोगोंमें लिख लीजिये, जो ईश्वरके बन्दोंसे, आदमियोंसे, अपने भाइयोंसे प्रेम करते हैं।'

'अच्छी बात है।'

देवदूतने अबूबिन अधमका नाम ऐसे लोगोंकी सूचीमें लिख लिया, जो मनुष्योंसे, अपने भाइयोंसे प्रेम करते हैं। इसके बाद देवदूत चला गया।

दूसरी रातको वह फिर आया। उसने अपनी पुस्तक अबूके आगे खोलकर रख दी। कहा : 'देखो, यह है उन लोगोंकी सूची, जिन्हें ईश्वर प्रेम करता है।'

अबूने देखा कि अबूका नाम सबसे ऊपर है!

सचमुच, ईश्वर उन लोगोंको सबसे ज्यादा प्यार करता है, जो अपने भाइयोंको प्यार करते हैं।

धर्मका असली रूप

ईश्वर-प्रेमकी पहचान है मनुष्यमात्रसे प्रेम करना, प्राणी-मात्रसे प्रेम करना।

यही है धर्मका असली रूप।

जो आदमी परायी पीर जानता है, दूसरेका दुख-दर्द समझता है, वही आदमी धर्मात्मा है।

घट-घटमें वही परमात्मा समाया है। मुझे सूई चुभनेसे जैसी पीर होती है, वैसी ही दूसरेको भी होती है। अपने जैसा ही दूसरेका जी समझना चाहिए। किसीको सताना नहीं चाहिए। किसीको दुख नहीं देना चाहिए। कोई गाली भी दे दे, तो चुप-चाप सुन लेना चाहिए। किसी बातका घमण्ड नहीं करना चाहिए। सबपर दया रखनी चाहिए। सबपर प्रेम करना चाहिए। यही है धर्मका असली मर्म।

पूजा-पाठ, तीर्थ-व्रत, जप-तप सब बेकार हैं, यदि हम धर्मके इस मूल तत्त्वको नहीं समझते।

बाबा कबीरदासने ठीक कहा है :

जब मैं भूला रे भाई, मेरे सतगुरु जुगत लखाई॥
किरिया-करम-अचार मैं छाँड़ा, छाँड़ा तीरथका न्हाना।
सगरी दुनिया भई सयानी, मैं ही इक बौराना॥

ना मैं जानूँ सेवा बन्दगी, ना मैं घण्ट बजाई।
ना मैं मूरत धरि सिंघासन, ना मैं पुहुप चढ़ाई॥

ना हरि रीझै जप-तप कीन्हें, ना कायाके जारे।
ना हरि रीझै धोती छाँड़े, ना पाँचोंके मारे॥

दाया राखि धरमको पाल जगसूं रहै उदासी।
अपना-सा जिय सबकौ जानै ताहि मिलै अविनासी॥

सहै कुशब्द बादको त्यागै छाँड़ै गर्व गुमाना।
सत्त नाम ताहीको मिलिहै कहै 'कबीर' दिवाना॥

यही बात नरसी भगत कहते हैं :

ज्यां लगी आतमा तत्व चीन्यो नहिं
त्यां लगी साधना सर्व जूठी।
मानुषा देह तारो एम एले गयो
मावठानी जेम वृष्टि वूठी॥

शुं थयुं स्नान पूजा ने सेवा थकी,
शुं थयुं घेर रही दान दीधे ?
शुं थयुं धरी जटा भस्म लेपन कर्यें,
शुं थयुं बाल लोचन कीधे ?

शुं थयुं तप ने तीरथ कीधा थकी,
शुं थयुं माल ग्रही नाम लीधे ?
शुं थयुं तिलक ने तुलसी धार्या थकी,
शुं थयुं गंगजल पान कीधे ?

शुं थयुं वेद व्याकरण वाणी वदे,
शुं थयुं राग ने रंग जाण्ये ?
शुं थयुं खट दरशन सेव्या थकी,
शुं थयुं वरणना भेद आण्ये ?

ए छे परपंच सहु पेट भरवा तणा
आतमा राम परब्रह्म न जोयो।
भणे 'नरसैंयो' तत्व दर्शन विना
रत्न चिन्तामणि जन्म खोयो॥

स्नान और पूजा करनेसे, दान देनेसे, जटा धारण करनेसे, भस्म रमानेसे, वाल मुँड़ानेसे, नोच-नोचकर बाल निकाल डालने-से, तपस्यासे क्या होता है ? तीरथसे, माला जपनेसे, तिलक

लगानेसे, तुलसी या रुद्राक्षकी माला पहन लेनेसे, गंगाजल पीनेसे, वेद-पुराण पढ़ लेनेसे, व्याकरण रट लेनेसे क्या होता है ? न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, पूर्वमीमांसा, उत्तरमीमांसा—इन षट् दर्शनोंका ज्ञान प्राप्त कर लेनेसे क्या होता है ?

यह सारा प्रपंच व्यर्थ है। बेकार है। उससे पेट भर सकता है। और कुछ नहीं।

जबतक मनुष्य आत्माके तत्त्वको नहीं समझता, तबतक उसकी सारी साधना झूठी है। धर्मके, साधनाके तत्त्वको समझे बिना सारा जीवन बेकार चला जाता है।

कुछ लोग ऐसा मान बैठे हैं कि धर्मका बाहरी रूप ही सब कुछ है। जो आदमी बाहरी आचार-विचार बहुत करता है, उसीको लोग धर्मात्मा मान लेते हैं।

ऐसी बात नहीं है।

बाहरी आचार-विचार होता है चित्तको शुद्ध करनेके लिए। चित्त यदि शुद्ध नहीं हुआ और धर्मका असली तत्त्व समझमें नहीं आया, तो सब बेकार है।

धर्मात्मा क्या करता है ?

महावीरप्रसाद द्विवेदी हिन्दीके निर्माता लोगोंमेंसे एक थे।

एक बार उनके गाँवपर किसी हरिजनको साँपने काट खाया।

उन्होंने देखा तो तुरन्त अपना जनेऊ तोड़कर उससे हरिजनके उस अंगको कसकर बाँध दिया, जहाँ साँपने काटा था।

लोग चौंक पड़े।

एक तो जनेऊ यों ही पवित्र !

फिर कोई ब्राह्मण उसे तोड़कर हरिजनको बाँधे—यह बात लोग सोच भी नहीं पाते थे !

पर जो 'ब्राह्मण' है, ब्रह्मको जानता है, आत्माके तत्त्वको पहचानता है, 'घट-घटमें तोरा सांई रमत है'—इस बातको समझता है, धर्मके असली तत्त्वका ज्ञान रखता है, वह ऐसे मौकेपर पीड़ित आदमीके प्राण बचायेगा कि बैठकर यह सोचेगा कि मैं इसे छुऊँ कि नहीं ? रस्सी नहीं है तो क्या जनेऊको तोड़ डालूँ ? वह तो तुरत वही करेगा, जो पण्डित महावीर-प्रसाद द्विवेदीने किया।

सब भ्रममें हैं

धर्मके इस भीतरी तत्त्वको बहुत कम लोग समझते हैं। ऊपरी आचारपर ही लोग ज्यादा जोर देते हैं। पर उससे आदमी-का अहंकार ही बढ़ता है, उसकी सच्ची उन्नति नहीं होती।

महात्मा सुन्दरदास कहते हैं :

सब कोउ भूलि रहे इहिं बाजी।
आपु आपुने अहंकारमें पातिसाहि कहा पाजी॥
पातिसाहिकै बिभौ बहुत बिधि, खात मिठाई ताजी।
पेट पयादो भरत आपनौ जीमत रोटी भाजी॥

पण्डित भूले वेद पाठ करि, पढ़ि कुरान कौं काजी।
वे पूरब दिशि करैं दण्डवत, वै पच्छिमहि निवाजी॥

तीरथिया तीरथ को दौड़े, हज को दौड़ै हाजी।
अन्तरगति को खोजैं नाहीं, भ्रमणै ही सों राजी॥

अपने-अपने मदके मांते, लखैं न फूटी साजी।
'सुन्दरि' तिनहिं कहा अब कहिये, जिनकै भई दुराजी॥

दरिया साहबका भी यही कहना है :

दुनियां भरम भूल बौराई।

आतम राम सकल घट भीतर जाकी सुद्ध न पाई॥

मथुरा कासी जाय द्वारिका अरसठ तीरथ न्हावै।
सतगुरु बिन सोधा नहिं कोई फिर-फिर गोता खावै॥

चेतन मूरत जड़को सेवै बड़ा थूल मत गैला।
देह अचार किया कह होई भीतर है मन मैला॥

जप तप संजम काया कसनी सांख्य जोग ब्रत दाना।
यातें नहीं ब्रह्मसे मेला गुनहर करम बंधाना॥

बकता ह्वै ह्वै कथा सुनावै स्रोता सुन घर आवै।
ज्ञान-ध्यानकी समझ न कोई कह सुन जनम गंवावै॥

जन 'दरिया' यह बड़ा अचम्भा कहै न समझै कोई।
भेड़ पूँछ गहि सागर लाँघै निश्चय डूबै सोई॥

भला भेड़की पूँछ पकड़कर कोई समुद्र पार कर सकता है? लोग जिन्दगीभर कथा कहते रहते हैं, वेद, पुराण, गीता, भागवत, कुरान, गुरुग्रन्थ सुनते रहते हैं, तीर्थ-व्रत, जप-तप करते रहते हैं, पर अन्ततक बने रहते हैं पत्थर ही!

क्यों ?

इसीलिए कि वे धर्मके बाहरी रूपको पकड़कर बैठ जाते हैं, भीतरी तत्त्वको छूते ही नहीं।

फिर उनकी साधना सफल भी हो तो कैसे ?

फिर उनकी वन्दगी कबूल भी हो तो कैसे ?

साधना क्यों नहीं सफल होती ?

धर्मका मतलब यह है कि आदमी ईश्वरकी तरफ बढ़े। उसके चित्तमें शान्ति आये। प्रसन्नता आये। उसकी चिन्ताएँ मिटें। वह अच्छे रास्तेपर चले।

पर, बरसों जप-तप, पूजा-पाठ, तीर्थ-व्रत करनेपर भी ऐसा कुछ नहीं होता। इसका कारण यही हैं कि हम धर्मके भीतरी तत्त्वको समझते ही नहीं।

[illegible] बादशाहत ठुकराकर, लकड़ी काटकर अपनी गुजर करनेवाले सूफी फकीर इब्राहीम बिन अदहमसे लोगोंने पूछा : "हजरत, जरा यह तो बताइये कि हमारी दुआ कबूल क्यों नहीं होती ?"

बोले : "भैया, तुम यह तो जानते हो कि खुदा है, मगर तुम उसकी बन्दगी नहीं करते ! उसकी ने'मत खाते हो, मगर शुक्र नहीं करते ! वहिश्त (स्वर्ग) और दोजख (नरक) है, यह तो मानते हो, मगर एकसे मिलनेका और दूसरेसे बचनेका सामान नहीं करते। शैतानको दुश्मन तो समझते हो, मगर

उससे दूर नहीं रहते । जानते हो कि मौत आयेगी, मगर उसकी तैयारी नहीं करते । जानते तो हो कि मुझमें ऐब है, बुराई है, फिर भी दूसरोंके ऐब निकाला करते हो ! भला ऐसे आदमीकी दुआ कैसे कबूल हो ?

बेहतर है कि जाहिर और बातिन, बाहर और भीतर (मन और कर्म) एक हो ।''

यह है धर्मका भीतरी तत्त्व ।

सब जहाजोंका है लंगर एक घाट : ६ :

चार यात्री थे।

एक था रूमी। एक था अरब। एक था पारसी। एक था तुर्क।

भटकते-भटकते चारों एक जगह इकट्ठे हो गये।

धूल-धक्कड़, काँटा-कंकड़, सर्दी-गर्मीकी तकलीफोंसे वे परेशान थे।

चारोंको लगी थी भूख, पर एक यात्रीकी भाषा दूसरा यात्री नहीं समझता था।

जहाँ भाषा नहीं होती, वहाँ इशारे चलते हैं।

इशारोंकी भाषामें उन्होंने आपसमें बात की।

भूख सबको है। खाना सबको है। भूख मिटानेको सभीको कुछ न कुछ चाहिए।

चारोंने अपने पासके पैसे इकट्ठे किये।

अब लिया क्या जाय?

अरबकी माँग थी—एनब।

तुर्ककी माँग थी—उज़्म।

पारसीकी माँग थी—अंगूर।

रूमीकी माँग थी—अस्ताफ़ील।

सब अपनी-अपनी माँगपर अड़े थे।

आदमीकी इच्छा जब पूरी नहीं होती तो उसे गुस्सा आता है, क्रोध आता है। वह गरम हो उठता है।

ये चारों यात्री आपसमें भिड़ गये। चेहरे तमतमा उठे। आँखें लाल हो गयीं। आपसमें घूँसेबाजी शुरू हो गयी।

तभी आ गया एक फलवाला। यात्रियोंकी भाषाओंका जानकार।

अंगूरोंकी एक डाली निकालकर उसने रख दी सामने।

अंगूरोंकी डाली देखते ही चारोंकी बाँछें खिल गयीं।

चारोंके चारों खुश।

यही तो वे चाहते थे।

फारसीके 'अंगूर' को ही अरबीमें कहते हैं—'एनब'। तुर्कीमें कहते हैं—'उज़ुम'। रूमीमें कहते हैं—'अस्ताफ़ील'। अंग्रेजीमें उसका नाम है—'ग्रेप', संस्कृतमें—'द्राक्षा', पहलवीमें—'दाख'।

यही हाल है धर्मोंका।

सब धर्म ईश्वरकी ओर ले जाते हैं।

सब ईश्वरको ही पुकारते हैं।

कोई किसी नामसे, कोई किसी नामसे!

रामकृष्ण परमहंस कहते हैं :

"भगवान्‌के अनन्त नाम, अनन्त रूप हैं। सच्चे हृदयसे उसका चाहे जो नाम लो, उससे परमात्मा मिल सकेगा।

पानीको कोई 'जल' कहता है, कोई 'आब', कोई 'वाटर', कोई 'एकुआ'। उसी तरह सच्चिदानन्द प्रभुको कोई कृष्ण कहता है, कोई हरि, कोई शिव कहता है, कोई देवी। किसी भाषामें उसका नाम 'अल्लाह' है, किसीमें 'गॉड', किसीमें 'यहोवा' है, तो किसीमें 'ब्रह्म'।"

रामकृष्ण परमहंस साधना करके ही इस नतीजेपर पहुँचे थे कि सब धर्म एक हैं।

रामकृष्ण परमहंस

रामकृष्णको बचपनसे ही भगवान्‌को पानेकी लगन लगी थी। दक्षिणेश्वरमें उनके बड़े भाई कालीबाड़ीमें पुजारी थे। उनके कहनेसे रामकृष्ण भी वहाँ पूजा करने लगे। पूजामें वे इतने मगन हो जाते कि आरती करते तो घण्टों आरती ही करते

रह जाते, घण्टा बजाते तो घण्टों घण्टा ही बजाते रह जाते। उन्हें तन-मनका होश न रहता। भक्त रामप्रसाद, कमलाकान्त, नरेशचन्द्र आदिके भजन गाते-गाते उन्हें समाधि लग जाती। वे 'मातः' 'मातः' कहकर बेहोश होकर गिर जाते। ऐसे आदमी-से विधिवत् पूजा नहीं हो सकती, ऐसा मानकर पूजाका काम उनके भानजे हृदयको सौंप दिया गया। लोग समझते कि वे पागल हो गये हैं, पर उन्हें तो लगन लगी थी काली माताके दर्शनकी। वे तरह-तरहसे साधना करने लगे।

धर्म कहता है कि 'जबतक आदमी कनक और कामिनीकी आसक्ति नहीं छोड़ता, अभिमान नहीं छोड़ता, तबतक उसे भगवान्‌की प्राप्ति नहीं हो सकती।' रामकृष्णने सोचा कि इसकी साधना करनी चाहिए।

कनककी, धनकी, पैसेकी आसक्ति कैसे छूटे? इसके लिए रामकृष्ण गंगा-तटपर जाकर एक हाथमें रुपया लेते, दूसरेमें

मिट्टी। फिर दोनोंको जाँचते। कहते : "यह है माटी, यह है टाका (रुपया) !

माटीसे धान होता है, गेहूँ होता है, तेलहन होता है। खाने-पीनेका तरह-तरहका सामान पैदा होता है। पर भगवान् नहीं मिलता।

टाकामें बीबीका (रानी विक्टोरियाका) चेहरा होता है। इससे भी धान मिलता है, गेहूँ मिलता है, तेल मिलता है। दस आदमियोंका पेट चलता है, पर टाकासे भगवान् नहीं मिलता।

माटीसे तरह-तरहकी चीजें पैदा होती हैं। वे न हों तो टाकासे क्या खरीदें ? माटी तो टाकासे अच्छी है। लोग माटीको फेंकते हैं, टाकाको समेटते हैं। कैसी मूर्खता है !

पर भगवान् न माटीसे मिलता है, न टाकासे। दोनों बेकार हैं। दोनों एक हैं।"

यों 'टाका माटी' 'टाका माटी' कहते-कहते वे दोनोंको गंगाजीमें फेंक देते।

ऐसा करते-करते रामकृष्णके मनसे कनककी आसक्ति बिलकुल जाती रही। हालत यह हो गयी कि सोना-चाँदी आदि कोई धातु उनके किसी अंगसे छू जाती तो उनका वह अंग ही ऐंठ जाता !

कामिनीमें, स्त्रीमें भी आदमीकी आसक्ति नहीं रहनी चाहिए। इसके लिए रामकृष्ण हर स्त्रीको माताके रूपमें देखते थे। उनका विवाह हो चुका था। वे अपनी पत्नी शारदामणिके

साथ एक ही विस्तरपर सोते। कभी उनके मनमें विकार न आता।

एकाध वार जब वे अकेले थे तो लोग उन्हें पकड़कर वेश्याओंके कोठेपर ले गये। वे उन्हें देखकर 'आनन्दमयी माँ' 'आनन्दमयी माँ' कहकर प्रणाम करने लगे। फिर उनके बीचमें बैठकर यही रट लगाने लगे। थोड़ी देरमें वे समाधिमें डूब गये। कई स्त्रियोंने उन्हें डिगानेकी कोशिश की, पर उनके मनमें तो विकार था ही नहीं।

अहंकार मिटानेके लिए रामकृष्ण मेहतरोंके मुहल्लेमें जाकर झाड़ू लगाते। कालीवाड़ीके भिखारियोंकी जूठी पत्तलें सिरपर उठाकर गंगामें फेंक आते।

यों रामकृष्णने तरह-तरहसे साधना की। अन्तमें उन्हें सफलता मिली। कहते हैं कि उन्हें माँ कालीके दर्शन प्राप्त हुए। उन्हें साफ दिखाई देने लगा कि सारे संसारमें उसी जगन्माताका प्रकाश फैला हुआ है।

तरह-तरहकी साधना

इसके बाद उन्होंने भिन्न-भिन्न मतों, पंथों और धर्मोंके अनुसार भी साधना करके देखी।

उन्होंने तांत्रिक भावसे, वैष्णव भावसे, शांत भावसे, दास्य भावसे, सख्य भावसे, वात्सल्य भावसे, माधुर्य भावसे, साकार भावसे, निराकार भावसे साधना की। पंचनामी पंथकी और बाउल पंथकी भी साधना की। योग और वेदान्तके अनुसार भी साधना की। सिख, इसलाम और ईसाई धर्मके अनुसार भी साधना की।

वे जब जिस मत, पंथ या धर्मके अनुसार साधना करते, तब उसके आचार-विचार और नियमोंका पूरे तौरसे पालन करते। दास्य भावके लिए साधना करते समय वे कपड़ेकी पूँछ लगाकर हनुमान्की तरह पेड़पर बैठकर 'रघुवीर हो, रघुवीर हो!' चिल्लाया करते। इसलाम धर्मकी साधना करते समय वे किसी हिन्दू-मन्दिरमें न जाते, प्याज खाते और 'अल्लाह' 'अल्लाह' चिल्लाते।

रामकृष्णने इस तरह तमाम पंथोंकी, तमाम धर्मोंकी, तमाम मतोंकी साधना करके देखी। हर तरहकी साधनामें उन्हें सफ-

लता मिली। जब जिस मतके अनुसार साधना करते, तब उस मतका कोई सिद्ध पुरुष आकर उन्हें दर्शन देता। कहते हैं कि उन्हें हजरत मुहम्मद और प्रभु ईसाके भी दर्शन हुए थे।

सब धर्म एक हैं

सब मतों, पंथों और धर्मोंकी साधना करके रामकृष्ण परमहंस इसी नतीजेपर पहुँचे कि सारे धर्म एक हैं। सारे पंथ एक हैं। सारे रास्ते ईश्वरकी ओर ही ले जाते हैं। सबका लक्ष्य एक है। हम चाहे जिस धर्मकी उपासना करें, पहुँचेंगे एक ही मुकामपर।

रस्ते जुदे जुदे हैं मकसूद एक है!

पूजा और पाठ, जप और तप, व्रत और अनुष्ठान, रोजा और नमाज, तसबीह और माला, ज्ञान और ध्यान सब मनुष्य-को एक ही ठिकानेपर पहुँचाते हैं।

चाहे प्रभुको 'काली' कहकर पुकारो, चाहे 'कृष्ण', उससे कुछ नहीं बनता-विगड़ता। जरूरत एक ही बातकी है और वह यह कि चित्तको शुद्ध बनाकर एकाग्र मनसे भगवान्‌को पुकारो :

काली बलो कृष्ण बलो, किछूतेइ क्षति नाई।
चित्त परिष्कार रेखे एकमने डाका चाहि॥

हर मजहब इक-इक डाली है

या राम कहो या रहीम कहो, दोनोंकी गरज अल्लाहसे है।
या इश्क़ कहो या प्रेम कहो, मतलब तो उसीकी चाहसे है ॥

या धर्म कहो या दीन कहो, मकसूद उसीकी राहसे है।
या सालिक हो या योगी हो, मंशा तो दिले-आगाहसे है ॥

क्यों लड़ता है मूरख बन्दे, यह तेरी खामखयाली है।
है पेड़की जड़ तो एक वही, हर मजहब एक-एक डाली है ॥
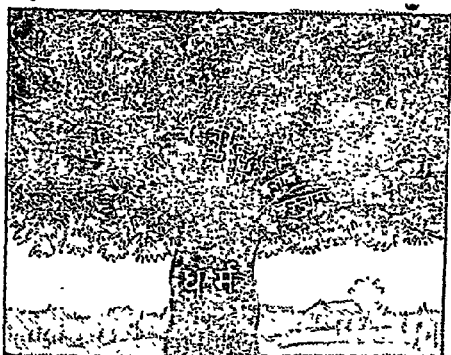
एक ही पेड़की इतनी सारी शाखाएँ हैं।

एक ही फूलकी इतनी सारी पंखुरियाँ हैं।

एक ही गुलदस्तेके इतने सारे फूल हैं।

किसीका रंग कैसा है, किसीका कैसा।

यह रंग-विरंगापन ही तो धर्मकी शोभा है ।
नये-नये फूल, नयी-नयी पत्तियाँ ।
नये-नये आचार, नये-नये विचार ।
कोई राम कहता है, कोई रहीम ।
कोई अल्लाह कहता है, कोई खुदा ।
कोई ईशू कहता है, कोई सतश्री अकाल ।
कोई अहुर मज्द कहता है, कोई यहोवा ।
कोई ईश्वरके किसी रूपका ध्यान करता है, कोई किसीका ।
किसीको भक्ति रुचती है, किसीको ज्ञान ।
किसीको कर्ममें आनन्द आता है, किसीको प्रार्थनामें ।
कोई प्रभुके किसी गुणका चिन्तन करता है, कोई किसीका ।

पर सबकी इच्छा है उसी एक मुकामपर पहुँचनेकी, जहाँ देर-सबेर सबको पहुँचना है ।

ऊपरसे भले ही भेद दीखता है, पर भीतर तो सबमें एक ही तत्त्व समाया हुआ है ।

आँख खोलकर देखनेभरकी जरूरत है ।

बनाओ शिवाला या मस्जिद, है ईंट वही चूना है वही ।
मेमार वही मजदूर वही, मिट्टी है वही, गारा है वही ॥

तकबीरका जो कुछ मतलब है, नाकूसका भी मंशा है वही ।
यह जिनको नमाजें कहते हैं, है उनके लिए पूजा भी वही ॥

फिर लड़नेसे क्या मतलब है ? जो फ़हम हो तुम नादान नहीं ।
जो भाई पै दौड़े गुर्राकर, वह हो सकता इन्सान नहीं ॥

ऊपरके दिखावटी भेदभावोंको लेकर लड़ना-झगड़ना बेवकूफी नहीं तो क्या है ?

सभी धर्म प्रेमकी शिक्षा देते हैं।

सभी धर्म सत्य और ईमानदारीपर जोर देते हैं।

सभी धर्म करुणा और दयाका उपदेश देते हैं।

सभी धर्म क्षमा और सन्तोषपर बल देते हैं।

हमें सभी धर्मोंका आदर करना चाहिए।

साधु और संत, ऋषि और मुनि युग-युगसे इसी बातकी पुकार मचाते आ रहे हैं।

रामकृष्ण परमहंस सभी धर्मोंका आदर करते थे।

गांधीजी भी सभी धर्मोंका आदर करते थे। अपनी प्रार्थना-में उन्होंने सभी धर्मोंकी प्रार्थना शामिल की थी।

विनोबा भी सभी धर्मोंका आदर करते हैं। उन्होंने तो ३६ नामोंकी एक नाम-माला ही बना ली है।

एक बार विनोबा जा रहे थे हृषीकेशसे हरिद्वार। काली-कमलीवालोंने उन्हें चन्दनकी एक मणिमाला भेट की। यों वे माला बहुत कम फेरते हैं, तकली और चरखा ही उनके लिए मालाका काम देते हैं; पर जब माला मिल ही गयी, तो वे रातको सोते समय उसे अपने पास रख लेते।

मालाके साथ उनका चिन्तन भी चलने लगा विभिन्न धर्मों और पंथोंका। होते-होते ये ३ श्लोक बन गये।

ॐ तत् सत् श्रीनारायण तू, पुरुषोत्तम गुरु तू।
सिद्ध बुद्ध तू, स्कन्द विनायक, सविता पावक तू।।
ब्रह्म मज्द तू, यह्व शक्ति तू, ईशुपिता प्रभु तू।
रुद्र विष्णु तू, राम कृष्ण तू, रहीम ताओ तू।।
वासुदेव गो-विश्वरूप तू, चिदानन्द हरि तू।
अद्वितीय तू, अकाल निर्भय, आत्मलिंग शिव तू।।

इस नाममालामें ३६ नाम हैं। हिन्दुओंके बहुतसे पंथोंके, देवताओंके नाम भी इसमें आ गये हैं और जैन, बौद्ध, सिख, पारसी, यहूदी, ईसाई, इसलाम, ताओ धर्मोंके आराध्य देवताओं-के नाम भी।

ऐसी नाम-माला सबके लिए उपयोगी है।

इसमें सभी धर्मों और पंथोंके लिए आदर है।

यह सम भाव जब हमारे हृदयमें आ बैठेगा, तो हमारा ही नहीं, सबका बेड़ा पार हो जायगा। तब शंखकी ध्वनि सुनकर मसजिदके भीतर भी हम आनन्दमें मगन होकर नाच उठेंगे। हमारा रोम-रोम पुकारेगा :

आता है वज्द मुझको, हर दीनकी अदापर।
मसजिदमें नाचता हूँ, नाकूसकी सदापर।।

सत्य, प्रेम और करुणा : ८ :

सत्य, प्रेम और करुणा—सभी धर्मोंकी बुनियाद है।

सत्य माने क्या ?

सत्य माने सच बोलना तो है ही। पर सत्य इतना छोटा नहीं है। सत्य बहुत व्यापक है।

सत्य माने सचाई।

सचाई हमारे जीवनमें ऊपरसे नीचेतक हो।

सचाई हमारी वाणीमें हो।

सचाई हमारे आचरणमें हो।

सचाई हमारे मनमें हो।

मन, वचन, कर्म—तीनोंमें सचाई हो।

कानेको 'काना' कहना सच है।

झूठेको 'झूंठा' कहना सच है।

पर यह सच कड़ुवा है, तीखा है, दुःख देनेवाला है।

जिससे किसीको कष्ट पहुँचे, किसीको चोट लगे, किसीका जी दुखे, ऐसा बोलना, ऐसा लिखना, ऐसा व्यवहार करना 'कानूनी सच' भले हो, 'असली सच' नहीं है।

महाभारतकी कहानी

महाभारतकी एक कहानी है।

अश्वत्थामा द्रोणाचार्यका बेटा था। बड़ा बहादुर, बड़ा योद्धा।

पाण्डवों-कौरवोंकी लड़ाई चल रही थी।

गुरु द्रोणाचार्यके तीखे बाणोंसे पाण्डव हैरान थे। उनपर पार पाना कठिन था।

पता चला कि उनको मारनेका एक उपाय यह है कि उनके बेटे अश्वत्थामाको मार दिया जाय।

पर अश्वत्थामाको मारना भी टेढ़ी खीर थी।

तब क्या हो?

किसीने सुझाया कि अश्वत्थामा नामका हाथी मार दिया जाय और द्रोणाचार्यसे कह दिया जाय कि 'अश्वत्थामा' मारा गया!

वही किया गया। हाथीको मारकर खबर फैला दी गयी कि अश्वत्थामा मारा गया।

पर द्रोणाचार्यको विश्वास कैसे हो?

धर्मराज युधिष्ठिर अगर कह दें कि अश्वत्थामा मारा गया तो काम बन सकता है।

पर धर्मराज तो धर्मराज। वे तो कभी झूठ बोलते नहीं।

उनसे कहा गया कि आप घोषणा कर दीजिये कि अश्वत्थामा मारा गया। पर उन्हें बताया नहीं कि मनुष्य अश्वत्थामा मारा गया है कि हाथी अश्वत्थामा।

वे बोले : "अश्वत्थामा हतो नरो वा कुञ्जरो वा!"

—'अश्वत्थामा मारा गया है—मुझे पता नहीं कि वह आदमी है या हाथी?...'

चालाकी क्या की लोगोंने कि आधा वाक्य जैसे ही उन्होंने कहा—"अश्वत्थामा हतो"—वैसे ही ढोल और झाँझ आदि

इतने जोरसे बजाना शुरू किया कि आगेका वाक्य सुना ही न जा सके।

द्रोणाचार्य अश्वत्थामाके मरनेका समाचार सुनकर बेचैन होकर गिर पड़े। उनके प्राण छूट गये। पाण्डवोंका काम बन गया।

पर धर्मराजको इतना-सा झूठ बोलनेके कारण थोड़ी देरके लिए नरकमें जाना पड़ा।

मतलब यह कि सच बोलना चाहिए। पूरा-पूरा सच बोलना चाहिए। उसमें किसी तरहकी भी मिलावट नहीं चल सकती।

पर वह सच ही क्या, जिसमें प्रेम न भरा हो, करुणा न भरी हो? सत्य तो वही है, जिसमें प्रेम हो, करुणा हो, दया हो। सबका कल्याण हो, सबका हित हो।

सत्यकी कसौटी

वर्ट्रेण्ड रसेल। विश्वके प्रसिद्ध वैज्ञानिकों, दार्शनिकों, विचारकोंमें सिरमौर।

एक बार वे टहल रहे थे देहातमें।

तबतक देखा कि एक लोमड़ी दौड़ी आ रही है बुरी तरह थकी हुई, पस्त, त्रस्त।

कुछ मिनट बाद कुछ शिकारी आ गये उसका पीछा करते-करते। रसेलसे उन्होंने पूछा: 'आपने लोमड़ी देखी है?'

'हाँ, देखी है।'

'किधर गयी है?'

और रसेलने दूसरी दिशा बता दी। गयी थी पूरब तो बता दी पश्चिम।

वे कहते हैं कि 'मैं नहीं मानता कि मैं उन शिकारियोंको सच बात बताता तो वह 'सच' होता !'

इसलाम कहता है

इसलाममें भी कहा गया है कि दूसरेकी जान बचानेके लिए झूठ बोल सकते हैं और उसकी गिनती सचमें ही होती है।

प्रेम और करुणा

प्रेम माने क्या ?

प्रेम कहते हैं चाहनेको, मुहब्बतको। प्रेममें होती है विशालता ! प्रेममें होती है व्यापकता। प्रेमकी गोदमें सारी दुनिया समा जाती है। सारे मनुष्य, सारे प्राणी प्रेमके दायरेके भीतर आ जाते हैं। फिर न किसीसे द्वेष रहता है, न किसीसे घृणा। सब अपने हैं। कोई पराया नहीं।

और करुणा ?

करुणा कहते हैं दयाको, रहमको।

जो भी दुःखी है, पीड़ित है, कष्टमें है, उसकी सेवाके लिए हृदयका बेचैन हो जाना ही करुणा है।

जिस आदमीमें करुणा नहीं, वह तो पत्थर है, पत्थर !

बाइबिलकी कहानी

बाइबिलमें एक कहानी आती है।

एक था धनी—डाइव्स।

वह शानदार कपड़े पहनता, शानदार भोजन करता, शानदार महलमें रहता, शानदार जीवन बिताता।

एक था गरीब—लाजारस।

उसके पास न तो खानेको था, न पहननेको। रहनेका भी कोई ठिकाना नहीं।

घावों और फोड़ोंसे त्रस्त वह बेचारा पड़ा रहता डाइव्सके दरवाजेपर—इस आशासे कि शायद उसे जूठनके कुछ टुकड़े मिल सकें पेट भरनेके लिए।

दरवाजेपर कोई भूखा, नंगा, बीमार, दुःखी पड़ा रहे और हम उसकी तरफ ध्यान भी न दें—इससे बढ़कर और पाप क्या होगा?

डाइव्सको नरकमें जाना पड़ा।

अलबर्ट श्वाइजर—मानवताका विश्वविख्यात सेवक एक दिन एक रिपोर्टके पन्ने उलट रहा था। उसने पढ़ा कि अफ्रीकाके जंगलोंमें लोग कितने दुःखी हैं—कोढ़ी, रोगी, भूखे, नंगे! कोई उनकी सेवाको नहीं।

उसी दिन उसने तय किया कि मैं अपना सारा जीवन अर्पित करूँगा इन उपेक्षितोंके लिए। हम डाइव्सकी तरह मौजका जीवन बितायें और ये बेचारे लाजारसकी तरह तड़प-तड़पकर मरें!

श्वाइजरने इन दुखियोंकी सेवाके लिए डॉक्टरी सीखी और सारा जीवन उनकी सेवामें अर्पित कर दिया। अभी-अभी उसका देहान्त हुआ है ४ सितम्बर १९६५ को, ५२ वर्षकी ठोस सेवाके बाद।

बुद्ध हों या महावीर, ईसा हों या मुहम्मद, गांधी हों या विनोबा—धर्मके तत्त्वको जाननेवाले सभी लोग इस बातको मानते हैं कि सत्य, प्रेम और करुणा ही सब धर्मोका सार है।

सबको सन्मति दे भगवान् : ६ :

धर्म कहता है सच बोलो। सचपर चलो। जैसा कहो, वैसा करो। ईमानदारी बरतो।

धर्म कहता है किसीको सताओ मत। किसीको कष्ट मत दो। किसीका हक मत छीनो। किसीका गला मत काटो। किसीको दुःख न दो। न मनसे किसीका बुरा सोचो। न तनसे किसीको दुःख होने दो। न वचन ऐसा कहो, जिससे किसीको चोट लगे। सबसे—छोटेसे, बड़ेसे, गरीबसे, अमीरसे, पशुसे, पक्षीसे, प्राणीमात्रसे प्रेम करो।

धर्म कहता है कि सबपर दया करो। सबकी सेवा करो। सबको क्षमा करो। अपना हृदय उदार बनाओ। दरियादिल बनो।

चाहे जिस धर्मको हम देखें, समझें और बरतें, हम देखेंगे कि सब धर्मोंके भीतर यही तत्त्व समाया हुआ है।

सभीकी बुनियाद है—सत्य, प्रेम और करुणा।

हम करते क्या हैं ?

सभी लोग जानते हैं कि सत्य, ईमानदारी, प्रेम, दया, क्षमा आदि बातें धर्मका मूल हैं; पर सवाल यह है कि धर्मकी इन बुनियादी बातोंको जानते हुए भी हममेंसे कितने आदमी

ऐसे हैं, जो इन सब बातोंका सचाईसे पालन करते हैं ? पग-पगपर हम फिसल जाते हैं ।

बहुत-से लोग सोचते हैं कि धर्मकी बुनियादी बातें बच्चोंको बचपनसे सिखा दी जायँ, तो आगे चलकर वे उन बातोंको अपने जीवनमें उतारेंगे । धर्मकी मूल बातोंको यदि वे जानेंगे ही नहीं, तो फिर उन्हें अमलमें लानेकी बात ही कहाँ उठती है ?

सच पूछिये तो बात ऐसी नहीं है । बच्चे हों या बूढ़े, जवान हों या बड़े—ज्यादा लोग ऐसे ही हैं, जो जान-बूझकर गलती करते हैं ।

अमेरिकाकी एक खोज

कुछ साल पहले अमेरिकाके 'इन्स्टीट्यूट फार सोशल एण्ड रेलीजस रिसर्च' की ओरसे १ लाख डालर (१ डालर लगभग ७ रुपया) खर्च करके ५ सालमें एक शोध की गयी । शोध करनेवाले थे मनोविज्ञानके दो आचार्य । एक थे येल इन्स्टीट्यूट आफ ह्यूमन रिलेशन्सके डाइरेक्टर डॉक्टर मार्क ए० मे और दूसरे थे, येल डिविनिटी स्कूलके डॉक्टर ह्यू ए० हार्टशोर्न ।

इन दोनों मनोवैज्ञानिकोंने ८ से लेकर १४ सालकी उम्रके १० हजार बच्चोंपर तरह-तरहसे प्रयोग किये । 'केरेक्टर एजूकेशन इन्क्वायरी' नामसे यह शोध की गयी । मैकमिलन कम्पनी, न्यूयार्कने 'स्टडीज इन डिसीट' नामसे इसकी पुस्तक प्रकाशित की है । इससे यह बात साफ हो जाती है कि धर्मकी बातोंका ज्ञान और बात है, धर्मकी बातोंका आचरण और बात है ।

इस प्रयोगमें जिन बच्चोंने झूठा आचरण किया, धोखा दिया, गलती छिपानेकी कोशिश की, उन लोगोंको इस बातका पूरा पता था कि सही क्या है, गलत क्या है। उन्हें बाइबिलके आदेश, धर्मके स्वर्ण नियम भलीभाँति मालूम थे। देखा तो यहाँतक गया कि ईमानदारी बरतनेवाले बच्चोंको धर्मके इन नियमोंका पता कम था, बेईमानीका आचरण करनेवाले बच्चोंको इनका पता ज्यादा था।

जान-बूझकर गलती

जो बात बच्चोंकी है, वही बड़ोंकी है। वही बूढ़ोंकी।

हम जानते हैं कि धर्म कहता है : सच बोलो, ईमानदारी बरतो—फिर भी हम झूठ बोलते हैं, झूठा आचरण करते हैं, बेईमानी करते हैं।

हम जानते हैं कि धर्म कहता है : किसीको सताओ मत, किसीको कष्ट मत दो; फिर भी हम रात-दिन दूसरोंको सताते रहते हैं, दूसरोंको बात-बातमें कष्ट पहुँचाते रहते हैं।

हम जानते हैं कि धर्म कहता है : सबसे प्रेम करो, सबको अपना समझो; फिर भी हम दूसरोंसे द्वेष करते हैं, दूसरोंसे घृणा करते हैं, दूसरोंको पराया समझते हैं।

हम जानते हैं कि धर्म कहता है : सबपर दया करो, सबकी सेवा करो; फिर भी हम ऐन मौकोंपर पत्थर बन जाते हैं, दूसरोंसे बुरा व्यवहार करते हैं।

यही तो है हमारी हालत।

हम धर्मका डंका तो खूब पीटते हैं, अपने-अपने धर्मका [illegible]
खूब मारा करते हैं, पर धर्मका आचरण बिलकुल नहीं करते ।

धर्मका टेढ़ा रास्ता

धर्म क्या कहता है ? धर्ममें किन बातोंका आदेश दिया गया है—इसको यदि हम सोचें, धर्मकी बातोंपर अमल करें, तो हम न तो कोई गलत काम करेंगे, न किसीको हम सतायेंगे, न हम किसीसे झगड़ा करेंगे और न किसीसे वैर-विरोध करेंगे। हमारे रोम-रोमसे सत्य, प्रेम और करुणाकी आवाज निकलती होगी।

यह ठीक है कि धर्मकी बुनियादी बातोंपर अमल करना हँसी-खेल नहीं है; पर हम यदि सच्चे हिन्दू बनना चाहते हैं, सच्चे
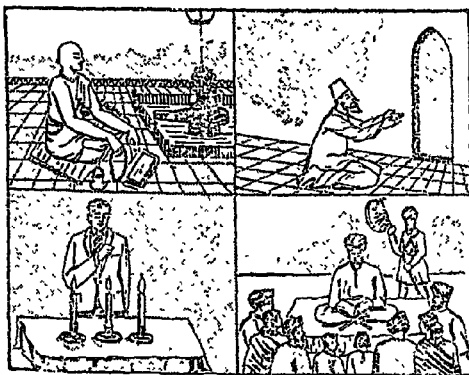
मुसलमान बनना चाहते हैं, सच्चे ईसाई बनना चाहते हैं, सच्चे जैन बनना चाहते हैं, सच्चे सिख बनना चाहते हैं, सच्चे बौद्ध

... सच्चे पारसी बनना चाहते हैं, सच्चे यहूदी बनना चाहते हैं, तो हमें यह कष्ट भुगतना ही पड़ेगा।

हम पग-पगपर भटकते हैं। धर्मको छोड़कर अधर्मके रास्ते-पर चल पड़ते हैं। यह ठीक नहीं।

अबतक जो गलती हुई सो हुई। अबसे हम पिछली गल-तियोंको न दुहरायें।

धर्म हमसे कहता है कि हम उदार और दयालु बनें, सच्चे और अच्छे बनें, नेक और ईमानदार बनें।

हम ऐसा बननेका पक्का निश्चय कर लें तो हम सच्चे धर्मात्मा बन सकते हैं, जरूर बन सकते हैं।

आइये, हम अपनेको सुधारनेका जी-जानसे प्रयत्न करें और प्रभुसे यह प्रार्थना करें :

सबको सन्मति दे भगवान् !